मत्स्य पुराण[1] में शिवतत्त्व

पद्म पुराण(उत्तरखण्ड 236/18) के अनुसार यह एक तामस पुराण अर्थात् शैव पुराण है। परन्तु इस पुराण में शिव से संबंधित कथाएँ तथा तथ्य विष्णुसंबंधी कथाओं एवं तथ्यों से कम हैं। पुनः यह ग्रन्थ विष्णुअवतार मत्स्य तथा मनु के बीच संवाद से जन्म लेता है। इस ग्रन्थ के अन्त में भी भगवान् विष्णु की महिमा गायी गयी है।अतः इस पुराण को वैष्णव पुराण माना जाना चाहिये।

नारद पुराण(पूर्वभाग, चतुर्थपाद, अ. 107) में दी गयी मत्स्य पुराण की विषयसूची के अनुरूप ही यह पुराण उपलब्ध होता है। नारद पुराण पूर्वभाग(107/2) तथा स्वयं मत्स्य पुराण(अध्याय 53/50) के अनुसार इसमें 14000 श्लोक होने चाहिये। इस पुराण में सात कल्पों की मिली-जुली कथा है (नारद पु. पू. ख. 107/1)। वर्तमान में उपलब्ध इस पुराण में 291 अध्याय हैं।

भगवान् शिव का स्वरूप

इस पुराण में भगवान् शिव को ही परमतत्त्व, परब्रह्म तथा परमसत् स्वीकार किया गया है। परमतत्त्व सदाशिव ही सगुणरूप धारणकर जगत् की सृष्टि, स्थिति तथा लय का हेतु बनता है। सदाशिव विश्वरूप होने के साथ-साथ विश्व से परे भी हैं। अर्थात् वे निर्गुण एवं सगुण दोनों रूपों में विद्यमान हैं। यहाँ हम इस पुराण के उन सन्दर्भों को देखेंगे जिनसे शिव के सगुण एवं निर्गुणरूपों की झलक मिलती है।

भगवान् शिव की स्तुति करते हुए शुक्राचार्य उन्हें शितिकण्ठ, जटाजूटधारी, वर देनेवाले, परम पवित्र, बहुरूप, देवों के देव, विश्वबीज, सहस्त्रशिर एवं नेत्रवाले, दयालु, विश्वरूप, त्रिनेत्र, कपाल एवं पिनाक धारण करनेवाले, असुरों का विनाश करनेवाले, पशुपति, भूतपति, प्रणवरूप, ऋग्, यजुः और सामवेदरूप, वषट्कार, भूतभव्य के स्वामी, निर्गुणरूप तथा सर्वात्मा आदि कहा है।(म. पु. 47/126-165)

नमोऽस्तु तुभ्यं भगवन्! विश्वाय कृत्तिवाससे।
पशुनां पतये तुभ्यं भूतानांपतये नमः।।
प्रणवे ऋग्यजुःसाम्नेस्वाहायचस्वधाय च।
वषट्कारात्मने चैव तुभ्यं मन्त्रात्मनेनमः।। (म. पु. 47/154-155)

अर्थात्-विश्वरूप एवं गजचर्म को धारण करनेवाले भगवान् को नमस्कार। पशुपति एवं भूतपति को नमस्कार। प्रणवस्वरूप, ऋक्, यजुः एवं सामदेवस्वरूप, स्वाहा, स्वधा, वषट्कार एवं मन्त्रात्मस्वरूप भगवान् शिव को नमस्कार।

एक अन्य स्थल पर भगवान् शिव को भूत-भव्य-ईश, शूलपाणी, अजन्मा, सहस्त्रों सूर्यों की भाँति तेजवान, चन्द्रमा को धारण करनेवाले, नीललोहित, वर देने के लिये उत्सुक, पशुपति,

1. प्रस्तुत लेख, एच. एच. विल्सन द्वारा संपादित तथा 1983 में नाग पब्लिशर्स द्वारा दो खण्डों में प्रकाशित 'श्रीमत्स्य महापुराणम्' की प्रति पर आधारित है।

जटाजूटधारी, नित्य, सबके ईश, महादेव, त्रिनेत्र, शान्तस्वरूप, विश्वबीज, अचिन्त्य, सभी देवों के पूज्य, वृषध्वज, मुण्ड को धारण करनेवाले, अजेय, विश्वकी आत्मा, विश्व का रचयिता, विश्वव्यापक तथा भक्तवत्सल आदि कहा गया है। (म. पु. 132/18-29)

विश्वात्मने विश्वसृजे विश्वमावृत्य तिष्ठते।

...

भक्तानुकम्पिने नित्यं दिशते यन्मनोगतम्।। (म. पु. 132/28-29)

अर्थात्-विश्वात्मा, विश्व का सृजन करनेवाले, विश्व में व्यापक होकर स्थित रहनेवाले, भक्तों पर दया करनेवाले, नित्य तथा इच्छित वस्तु प्रदान करनेवाले (को नमस्कार है)।

अन्यत्र शिव को जगत्पति (म. पु. 154/96) तथा लोकनाथ (म. पु. 154/130) कहा गया है। नारदजी हिमाचल को पार्वती के भावी पति (शिव) के बारे में बतलाते हुए कहते हैं कि उसका पति अजन्मा है क्योंकि वह भूत एवं भविष्य सभी के उद्गम का स्रोत है, सबका शरणस्थल है तथा शाश्वत परमेश्वर है। ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र तथा मुनिगण जन्म, जरा तथा मृत्यु के अधीन हैं। वे सभी परमेश्वर शिव की क्रीड़ा के विषय हैं। उसी की इच्छा से ब्रह्मा भुवनपति हैं और विष्णु विभिन्न युगों में नाना शरीर धारण करते हैं। विष्णु के विभिन्न अवतार माया के माध्यम से होते हैं। ब्रह्मा से लेकर स्थावरतक जो कुछ भी संसार में है वह सब जन्म, मृत्यु तथा दुःख आदि परिवर्तनों के वशीभूत है। परन्तु महादेव अचल, स्थाणु, जन्म तथा जरा से रहित हैं तथा उन्हीं से सभी वस्तुएँ पैदा होती हैं। ऐसा महादेव जो जगन्नाथ तथा निरामय है, पार्वती का भावी पति होगा।

न स जातो महादेवो भूतभव्यभवोद्भवः।
शरण्यः शाश्वतः शास्ता शङ्करः परमेश्वरः।।
ब्रह्मविष्णविन्द्रमुनयो जन्ममृत्युजरार्दिताः।
तस्यैते परमेशस्य सर्वे क्रीडनका गिरे।।
आस्ते ब्रह्मा तदिच्छातः संभूतो भुवनप्रभुः।
विष्णुर्युगे युगे जातो नानाजातिर्महातनुः।।
मन्यसे मायया जातं विष्णुश्चापि युगे युगे।
ब्रह्मादिस्थावरान्तोऽयं संसारो यः प्रकीर्त्तितः।
स जन्ममृत्युदुःखार्त्तो ह्यवशः परिवर्त्तते।।
महादेवोऽचलः स्थाणुर्न जातो जनकोऽजरः।
भविष्यति पतिः सोऽस्या जगन्नाथो निरामयः।। (म. पु. 154/179-182, 183-184)

काम-दहन के पश्चात् रति ने भगवान् शिव की स्तुति में उन्हें देवों द्वारा वन्दित, भक्तों पर कृपा करनेवाले, जगत् के कारण, माया से आवृत्त रहनेवाले, कालस्वरूप, परमज्ञान को प्रदान

करनेवाले, निर्गुणरूप, नाना भुवानों के निर्माता, विश्वस्त्रष्टा, अनेक सृष्टियों के रचयिता, भक्तों की इच्छा पूरा करनेवाले, अनन्त रूपवाले, चन्द्रमा को धारण करनेवाले, अनन्त प्रतिष्ठावाले, वृष पर सवारी करनेवाले, सभी दु:खों को दूर करनेवाले, सृष्टि के स्वामी, महान् आचार्य तथा भक्तों के भय को दूर करनेवाले कहा है (म. पु. 154/262-272)। स्तुति की एक पंक्ति को देखें-

त्वमेवमेको भुवनस्य नाथो दयालुरुन्मूलितभक्तभीतिः।। (म. पु. 154/272)

अर्थात्-केवल तुम्हीं जगत् के नाथ हो; तुम दयालु तथा भक्तों के भय को दूर करनेवाले हो।

पार्वती की परीक्षा लेने सप्तर्षिगण जाते हैं। वहाँ जाकर वे लोग शिवतत्त्व की गलत ढंग से व्याख्या कर पार्वती को उसके निश्चय से विचलित करना चाहते हैं। उस समय पार्वती (शिवतत्त्व के स्वरूप को ध्यान में रखते हुए) सप्तर्षियों से जवाबी प्रश्न के माध्यम से शिवतत्त्व के स्वरूपपर प्रकाश डालती हैं। वे कहती हैं कि "आप लोग प्रजापति के तुल्य हैं और सभी कुछ जाननेवाले हैं। पर इतना निश्चित है कि आप लोग शाश्वत ईश जो अजन्मा तथा जगत् के कारण हैं, अव्यक्त तथा अमित प्रतिष्ठावाले हैं उनको नहीं जानते। उन्हें ब्रह्मा एवं विष्णु आदि देव भी नहीं जानते, अतः उनके तत्त्व का निर्णय करना ही व्यर्थ है। जिनसे प्रलय तथा सभी भूतों का प्रादुर्भाव होता है, जिनकी महिमा सभी भूतों तथा ब्रह्माण्ड में प्रकट है उसे आप नहीं जानते। आकाश, अग्नि, वायु, पृथ्वी तथा जल किसकी मूर्ति हैं? किससे वे प्रकट होते हैं? सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि किसके नेत्र हैं? किसके लिंग की पूजा भक्तिपूर्वक देव एवं दानव करते हैं? जो ब्रह्मा, इन्द्र तथा महर्षियों द्वारा महादेव कहे जाते है क्या उनकी महिमा को आप सब नहीं जानते?" इत्यादि। (म. पु. 154/345-351)

प्रजापतिसमाः सर्वे भवन्तः सर्वदर्शिनः।।
नूनं न वेत्थ तं देवं शाश्वतं जगतः प्रभुम्।
अजमीशानमव्यक्तममेयमहिमोदयम्।।
आस्तान्तद्धर्म्मसद्भावसम्बोधस्तावदद्भुतः।
विदुर्यन्न हरिब्रह्मप्रमुखाहि सुरेश्वराः।।
यतत्तस्य विभवात्स्वोत्थंभुवनेषु विजृम्भितम्।
प्रकटं सर्वभूतानां तदप्यत्र नवेत्थकिम्।।
कस्यैतद्गगनं मूर्त्तिः कस्याग्निःकस्यमारुतः।
कस्यभूः कस्य वरुणः कश्चन्द्रार्कविलोचनः।।
कस्यार्चयन्ति लोकेषु लिङ्गंभक्त्या सुरासुराः।
यं ब्रुवन्तीश्वरं देवा विधीन्द्राद्यामहर्षयः।।
प्रभावं प्रभवञ्चैव तेषामपि न वेत्थ किम्। (म. पु. 154/345-351)

इस पुराण में नर्मदा माहात्म्य के अन्तर्गत दशाश्वमेध-यज्ञतीर्थ का वर्णन है। इसके माहात्म्य

के सन्दर्भ में कथा आयी है कि इस तीर्थ की पश्चिम दिशा में महर्षि भृगु ने देवताओं के एक हजार वर्ष तक कठोर तपस्या की। फलस्वरूप उनका शरीर बल्मीक से ढँक गया तथा उनपर चिड़ियों ने घोंसले बना लिये। इन सब कारणों से शिव-पार्वती प्रभावित हो उन्हें कृतार्थ करने के उद्‌देश्य से उनके पास गये। पार्वती ने शिवजी से कहा कि आप बड़े कठोर हैं, अभीतक आपने ऋषि के ऊपर कृपा नहीं की। इसपर शिवजी कहते हैं कि यह ऋषि क्रोध से पूर्ण है इसी कारण अभीतक कृपा नहीं हुई।

इस प्रकार कहकर शिवजी ने उनके क्रोध को पार्वती के सामने दिखाने के लिये नन्दी को आदेश दिया कि वे ऋषि को उठाकर पटक दें। नन्दी के ऐसा करते ही भृगु क्रोधाविष्ट होकर श्राप देने को उद्यत हुए। उसी क्षण भगवान् शिव उनके सामने प्रकट हो गये। भगवान् शिव को देखकर उनकी उन्होंने स्तुति आंरभ कर दी। वे उनकी स्तुति में उन्हें भवातीत तथा भुवनपति कहते हैं जिनके गुणों का गान शेषनाग भी नहीं कर सकते; जो सत्त्व, रज एवं तमोगुण से क्रमशः आवृत्त हो जगत् की सृष्टि, स्थिति तथा प्रलय करते हैं। वे भुवनेश्वर हैं तथा अन्य सभी देवों से श्रेष्ठ हैं। जिनकी भक्ति की बराबरी यम, नियम, यज्ञ, दान, वेदाभ्यास, योग तथा धारणा आदि नहीं कर सकते तथा जिनकी भक्ति से ही संसार से मुक्ति मिल सकती है। अपनी स्तुति में भृगु मद-मोह एवं पाश आदि से मुक्ति दिलाकर मोक्षतक पहुँचाने के लिये शिव से प्रार्थना करते हैं(म. पु. 193/36-46)। उनकी स्तुति के कुछ अंश देखें-

त्वद्‌गुणनिकरान् वक्तुं कः शक्तो भवति मानुषो नाम।
वासुकिरपि हि कदाचिद्वदनसहस्रं भवेद्यस्य।।
सत्वं रजस्तमस्त्वं स्थित्युत्पत्त्योर्विनाशने देव।
त्वां मुक्त्वा भुवनपते! भुवनेश्वर नैव दैवतं किञ्चित्।। (म. पु. 193/37, 39)

अर्थात्-जिनके गुणों का गान सहस्र मुखोंवाले वासुकि भी नहीं कर सकते, जो सत्त्व, रज एवं तम स्वरूप हैं तथा जिनसे सृष्टि की उत्पत्ति, पालन एवं विनाश होता है; वे भुवनेश्वर हैं एवं अन्य सभी देवों से श्रेष्ठ भी हैं।

समुद्रमन्थन से जब कालकूट नामक विष प्रकट हो सभी देव-दानवों को जलाने लगा तब सभी देव-दानव उसे ग्रहण करने के लिये भगवान् शिव से निवेदन करने लगे। उन लोगों ने अपनी स्तुति में शिव को चारों ओर अनन्त आँखोंवाले, पिनाक, वज्र तथा त्रिशूल धारण करनेवाले, जटाजूटधारी, त्रैलोक्यनाथ, सुरों के शत्रु-हन्ता, सूर्य, चन्द्र एवं अग्निरूप नेत्रवाले, ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्ररूप धारण करनेवाले, काम एवं काल का विनाश करनेवाले, देवों के देव, सुरश्रेष्ठ, शुद्ध ज्ञान प्रदान करनेवाले, कैवल्य-मुक्तिस्वरूप, तीनों लोकों के विधाता, वरुण, इन्द्र एवं अग्निरूप, ऋग्, यजुः और सामवेदरूप, पुरुष, ईश्वर, सत्त्व और रजसरूप, व्यक्त, अव्यक्त तथा व्यक्ताव्यक्तरूप, भक्तों के दुःख को दूर करनेवाले, नारायण के प्रिय तथा नानारूपधारी इत्यादि कहा है।(म. पु. 250/28-40)

नमस्तुभ्यं विरूपाक्ष! सर्वतोऽनन्तचक्षुषे।
नमः पिनाकहस्ताय वज्रहस्ताय धन्विने।।

....

नमः सुरारिहन्त्रे च सोमाग्न्यर्काग्र्यचक्षुषे।
ब्रह्मणे चैव रुद्राय नमस्ते विष्णुरूपिणे।।
ब्रह्मणे वेदरूपाय नमस्ते देवरूपिणे।
साङ्ख्य योगाय भूतानां नमस्ते शम्भवाय ते।।

....

शुद्धबोधप्रबुद्धाय मुक्तकैवल्यरूपिणे।
लोकत्रयविधात्रे च वरुणेन्द्राग्निरूपिणे।।
ऋग्यजुः सामवेदाय पुरुषायेश्वराय च।

....

रजसेचैवसत्त्वाय नमस्ते स्तिमितात्मने।
अनित्यनित्यभावाय नमो नित्यचरात्मने।।
व्यक्ताय चैवाव्यक्ताय व्यक्ताव्यक्ताय वै नमः।
भक्तानामार्तिनाशाय प्रियनारायणाय च।। (म. पु. 250/28, 30-31, 34-37)

सुरासुरगण विषपान के लिये शिव को प्रेरित करने के लिये कहते हैं कि आप भक्तवत्सल, भुवनों के स्वामी, सर्वव्यापी, यज्ञ के अग्रभाग को ग्रहण करनेवाले, सौम्य एवं सोम आदि हैं।

भक्तानुकम्पी भावज्ञो भुवनादीश्वरो विभुः।
यज्ञाग्रभुक् सर्वहविः सौम्यः सोमः स्मरान्तकृत्।। (म. पु. 250/49)

उपरोक्त उद्धरण, जो इस पुराण में बिखरे नाना प्रंसगों से लिये गये हैं, भगवान् शिव के सगुण एवं निर्गुण दोनों रूपों की झलक देते हैं। निर्गुणरूप में वे प्रणवरूप, अव्यक्त, ब्रह्मा, विष्णु आदि देवों द्वारा भी अगम्य, जगत् के मूल कारण तथा भवातीत आदि हैं। सगुणरूप में वे नीलकण्ठ जटा-जूटधारी, वर देनेवाले, बहुरूप, देवों के देव, सहस्त्र नेत्र एवं शिरवाले, विश्वरूप, पशुपति, भूतपति, त्रिनेत्र, कपाल, पिनाक, वज्र एवं त्रिशूल धारण करनेवाले, सर्वात्मा, कामदेव एवं असुरों का विनाश करनेवाले, चन्द्रमा, सूर्य एवं अग्नि को नेत्ररूप में धारण करनेवाले, चन्द्रचूड़, सभी देवों में पूज्य, नित्य, सबके ईश, वृषवाहन, विश्वव्यापक, ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्ररूप, कर्त्ता, धर्त्ता एवं हर्त्ता, अजेय, शाश्वत, अजन्मा, भक्तवत्सल, लोगों की मनोकामना पूरा करनेवाले, वर देने के लिये सदैव उत्सुक, अचल, परमेश्वर, जरा-मृत्युरहित, उमापति, परमज्ञान एवं कैवल्य प्रदान करनेवाले, कालस्वरूप, सभी दुःखों को दूर करनेवाले, आकाश, अग्नि, वायु, पृथ्वी तथा जल जिनकी मूर्तियाँ हैं, मोह-माया आदि पाशों से मुक्त

करनेवाले तथा नारायण के प्रिय आदि विशेषणों से युक्त हैं।

शिवोपासना

जैसा हम ऊपर देख चुके हैं कि भगवान् शिव न केवल भोग एवं मोक्ष के दाता हैं अपितु वे भक्तवत्सल, शीघ्र प्रसन्न हो जानेवाले, वर देने के लिये सदैव उत्सुक रहनेवाले, सभी मनोकामनाओं को पूर्ण करनेवाले तथा सभी प्रकार के दुःखों से निजात दिलानेवाले हैं। समुद्रमन्थन से काल-कूट हलाहल निकला तो उसकी ज्वाला से सभी देव एवं असुर जलने लगे और ब्रह्मा, विष्णु तथा इन्द्र आदि किसी देव अथवा दानव के पास उसका समाधान नहीं था। तब भगवान् शिव ने ही कृपा करके उस विष से जगत् को मुक्ति दिलायी। जो कर्म किसी देव-दानव के वश में न था, उस कर्म को शिवजी ने कर दिखाया।

शिवोपासना से न केवल मानव अपितु देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, नाग, किन्नर आदि सभी प्रकार के लोगों ने इच्छित फल प्राप्त किये हैं। उदाहरण के लिये शुक्राचार्य, जिन्हें मृत संजीवनी विद्या प्राप्त हुई(म. पु. अ. 47), व्यास(म. पु. अ. 185), बाणासुर(म. पु. अ. 188), भृगु(म. पु. अ. 193), देव एवं दानव(म. पु. अ. 250 आदि), जैगीषव्य(म. पु. अ. 180) तथा कुबेर(म. पु. अ. 189) आदि।

मत्स्य पुराण में एक स्थलपर कहा गया है कि "भगवान् शिव की प्रसन्नता या अप्रसन्नता दोनों ही सिद्धिदायक अथवा फलप्रद रहती है, ऐसा मनु आदि ऋषियों ने कहा है।"

एवं मन्वादयो देव! वदन्ति परमर्षयः।
रुष्टाद्वाचाथ तुष्टाद्वा सिद्धिस्तूभयतो भवेत्।। (म. पु. 180/87)

पार्वती द्वारा यह पूछे जानेपर कि यज्ञ एवं उसके मन्त्रों द्वारा ब्राह्मण लोग किसकी उपासना करते हैं? भगवान् शिव कहते हैं कि वे सभी मन्त्रों तथा यज्ञों द्वारा मेरी ही उपासना करते हैं।(म. पु. 183/42-43)

वे आगे कहते हैं कि जो लोग रुद्र की उपासना करते हैं उन्हें भवसागर से कोई डर नहीं होता।

न तेषांभयमस्तीतिभवंरुद्रं यजन्ति यत्। (म. पु. 183/44)

एकस्थल पर भृगुजी भगवान् शिव की स्तुति में कहते हैं कि यम, नियम, यज्ञ, दान, वेदाभ्यास, धारणा तथा योग- ये सब-के-सब आपकी भक्ति की हजारवीं कला के भी बराबर नहीं हैं। जो शठतापूर्वक भी आपको नमस्कार करता है उनपर भी आप कृपा करते हैं। केवल आपकी भक्ति ही भवसागर से पार कराकर मोक्षतक पहुँचानेवाली है।

यमनियमयज्ञदानवेदाभ्यासाश्च धारणा योगः।
त्वद्भक्तेः सर्वमिदं नार्हति हि कलासहस्रांशम्।।
शाठ्येन नमति यद्यपि ददासि त्वं भूतिमिच्छतो देव!।
भक्तिर्भवभेदकरी मोक्षाय विनिर्मिता नाथ।। (म. पु. 193/40, 42)

भगवान् शिव पार्वती से आगे बताते हैं कि रुद्रोपासना दो प्रकार की होती है–मंत्र के साथ तथा बिना मन्त्र के। इसी प्रकार योग भी दो प्रकार का होता है–सांख्य एवं योग। जो लोग मुझे सर्वव्यापक समझते हैं वे योगी कहलाते हैं और जो लोग मुझे सभी भूतों की आत्मा के रूप में देखते हैं और मुझे अपने से अलग नहीं देखते हैं वे सांख्य–योगी कहलाते हैं। ये(सांख्य–योगी) कभी नष्ट नहीं होते। योग निर्गुण एवं सगुण दो प्रकार का होता है। सगुणयोग का ज्ञान हो सकता है जबकि निर्गुणयोग समझ के परे होता है।(म. पु. 183/44-48)

अमन्त्रो मन्त्रकोदेवि! द्विविधोविधिरुच्यते।।
सांख्यं चैवाथ योगश्च द्विविधो योग उच्यते।
सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः।।
सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्त्तते।
आत्मौपम्येन सर्वत्र सर्वंच मयि पश्यति।।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति।
निर्गुणः सगुणोवापियोगश्च कथितोभुवि।।
सगुणश्चैव विज्ञेयो निर्गुणो मनसः परः। (म. पु. 183/44-48)

पार्वती द्वारा पुनः यह पूछे जानेपर कि योगी लोग आपके किस रूप को देखते हैं? भगवान् शिव उत्तर देते हैं कि मेरा वास्तविक स्वरूप तो अमूर्त है किन्तु जो व्यक्तरूप है वह ज्योतिरूप है। अतः योगी को उसी प्रकाश(ज्योति) की उपलब्धि का प्रयास करना चाहिये।(म. पु. 183/57-59)

अमूर्तंचैव मूर्त्तश्च ज्योतीरूपं हि तत् स्मृतम्।।
तस्योपलब्धिमन्विच्छन् यत्नः कार्यो विजानता। (म. पु. 183/58-59)

उपरोक्त सभी उद्धरणों पर दृष्टिपात करें तो निम्नलिखित बातें स्पष्ट हैं। प्रथम यह कि भगवान् शिव की उपासना किसी भी भाव(चाहे प्रसन्न करनेवाले भाव या किसी अन्य) से करनी चाहिये। दूसरी बात यह है कि निर्गुण की बजाय सगुणयोग को ही साधना चाहिये। सगुणयोग में प्रकाश या ज्योतिस्वरूप शिव के अनुभव का अभ्यास किया जाना चाहिये।

(1) शिवलिंग की उपासना

शिवोपासना में लिंगपूजा का विशेष महत्त्व बताया गया है। इस पुराण में अनेक ऐसे उद्धरण हैं जहाँ लिंगपूजा का उल्लेख मिलता है। वाराणसी एवं नर्मदाक्षेत्र के माहात्म्य के अध्यायों में अविमुक्तक्षेत्र(काशी) की महिमा के सन्दर्भ में कहा गया है कि जो व्यक्ति इस क्षेत्र में शिवलिंग की पूजा करता है उसका सौ करोड़ कल्पों में भी पुनः जन्म नहीं होता।

अविमुक्तं समासाद्य लिङ्गमर्चयते नरः।
कल्पकोटिशतैश्चापि नास्ति तस्य पुनर्भवः।। (म. पु. 185/55)

एक अन्य स्थलपर भगवान् शिव पार्वती से कहते हैं कि अविमुक्तक्षेत्र हमें बहुत ही प्रिय है, इस कारण मैं यहाँ स्थित प्रत्येक लिंगों में विद्यमान रहता हूँ।(म. पु. 183/9)

नर्मदा-माहात्म्य के अन्तर्गत एक स्थलपर बताया गया है कि बाणासुर अपने सिरपर शिवलिंग रखकर शिव से प्रार्थना करते हुए कहता है कि आप चाहे तो मुझे मार डालिये पर मेरे इस लिंग को, जिसकी मैंने आजीवन भक्ति की है, नष्ट मत कीजिये।(म. पु. 188/56-60)

किस प्रकार का लिंग बनाना चाहिये? इस पुराण में इसका भी उल्लेख है। लिंग का परिमाण मन्दिर के परिमाण के अनुसार होना चाहिये। बुद्धिमान् मनुष्य को सुदर्शन स्वर्णलिंग बनाना चाहिये। लिंग की लम्बाई को चार भाग में बाँटना चाहिये। एक भाग के बराबर लिंग की मोटाई या व्यास बनाना चाहिये। अर्थात् ऊँचाई के चौथाई भाग के बराबर लिंग की मोटाई होनी चाहिये। लिंग की कुल लम्बाई का निचला तीसरा हिस्सा वर्गाकार बनाना चाहिये, बीच का तीसरा हिस्सा अष्टभुजाकार होना चाहिये और ऊपर का तीसरा हिस्सा, जिसकी पूजा होगी तथा जिसे नाभी कहते हैं, गोलाकर बनाना चाहिये। निचला वर्गाकार हिस्सा जमीन के भीतर होना चाहिये तथा मध्य भाग जल के भीतर रखना चाहिये। यह लिंग लकड़ी, पत्थर, मिट्टी या अन्य किसी भी रत्न का हो सकता है।(म. पु. अ. 263)

लिंग के मूल भाग में ब्रह्मा, मध्य भाग में विष्णु तथा ऊपरी भाग में शिव का स्थान होता है(म. पु. 263/16)। यहाँ उपरोक्त प्रकार के लिंग की उपासना का फल भी बताया गया है।

ऊपर के सन्दर्भों से यह स्पष्ट है कि लिंग की पूजा से भगवान् शिव को प्रसन्न किया जा सकता है। तथा लिंगपूजा से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव तीनों की पूजा हो जाती है क्योंकि भगवान् शिव स्वयं सर्वदेवमय हैं।

(2) भगवान् शिव की मूर्तिपूजा

इस पुराण में न केवल शिवलिंग अपितु शिव की विभिन्न मूर्तियों के भी निर्माण की विधि तथा उनके मानदण्ड बताये गये हैं। शिव की प्रतिमा के जंघे मोटे तथा बाजू और कंधे तपाये हुए सोने की भाँति होना चाहिये। उनकी जटाएँ सूर्य की रश्मियों की भाँति होनी चाहिये। माथे पर चन्द्रमा अंकित होना चाहिये। उनकी आकृति सोलह वर्ष के मुकुटधारी युवा की भाँति होनी चाहिये। उनके हाथ हाथी के सूंड की भाँति, जंघे एवं एड़ी सुडौल एवं गोलाकार होना चाहिये। उनके बाल सीधे, आँखें चौड़ी एवं लम्बी तथा व्याघ्रचर्म को धारण किया हुआ शरीर बनाना चाहिये। इसी तरह अन्य प्रकार के निर्देश भी दिये गये हैं।(म. पु. अ. 259)

शिवजी की मूर्ति नृत्य करते हुए या बैठे हुए बनायी जा सकती है। दोनों प्रकार की मूर्तियों के बनाने संबंधी अलग-अलग निर्देश हैं। इसी प्रकार भैरवमूर्ति, अर्धनारीश्वरमूर्ति तथा हरिहरमूर्ति आदि संबंधी नियम बताये गये हैं। हरिहरमूर्ति की उपासना से पाप नष्ट हो जाते हैं।(म. पु. अ. 260)

उपरोक्त दोनों अध्यायों में न केवल मूर्तिनिर्माण अपितु उसमें होनेवाली न्यूनता का भी उल्लेख

है। अगर मूर्ति का शास्त्रोक्त ढंग से निर्माण न किया जाय तो उससे क्या नुकसान होता है उसे भी बताया गया है। उदाहरण के लिये अगर मूर्ति के किसी अंग को छोड़ दिया गया है या ठीक से नहीं बनाया गया है तो उससे पूजक को दरिद्रता आदि प्राप्त होती है। इसी प्रकार अधिक अंग बनानेवाले मूर्तिकार का नाश हो जाता है। दुर्बल मूर्ति बनाने पर धन का नाश तथा अकाल पड़ता है।

(३) शैवतीर्थ

इस पुराण में अनेक शैवतीर्थो का वर्णन किया गया है। हम यहाँपर कुछ तीर्थों का उल्लेख करेंगे। इस पुराण में काशीक्षेत्र (अविमुक्त अथवा वाराणसी) तथा नर्मदाक्षेत्र का माहात्म्य बड़े ही विस्तार के साथ दिया गया है। काशीक्षेत्र का वर्णन छः अध्यायों (180 - 185) में तथा नर्मदाक्षेत्र का नौ अध्यायों (186 - 194) में किया गया है।

काशीक्षेत्र की महिमा बताते हुए भगवान् शिव पार्वती से कहते हैं कि इस क्षेत्र में निवास करके कुबेर (म. पु. 180/2 आदि) ने क्षेत्रपाल का पद तथा जैगीषव्य (180/58 - 59 इत्यादि) ने योगाचार्य का पद पाया। व्यास वेदों का विस्तार करनेवाले बने। इस क्षेत्र में ब्रह्मा, विष्णु, वायु, सूर्य, इन्द्रादि देव, देवर्षिगण तथा अन्य महात्मागण मेरी भक्ति करते हैं। अन्य सिद्धयोगी प्रछन्न वेश में रहकर हमारी उपासना करते हैं। इन सब लोगों ने इस क्षेत्र को महत्ता दी है क्योंकि यहाँ जो सिद्धि प्राप्त हो सकती है वह अन्यत्र संभव नहीं है।

रंस्यते सोऽपि पद्माक्षि! क्षेत्रेऽस्मिन् मुनिपुङ्गवः।
ब्रह्मा देवर्षिभिः सार्द्धं विष्णुर्वायुर्दिवाकरः।।
देवराजस्तथा शक्रो येऽपि चान्ये दिवौकसः।
उपासन्ते महात्मानः सर्वे मामेवसुव्रते।।
अन्येऽपि योगिनः सिद्धाश्छन्नरूपा महाव्रताः।
अनन्यमनसोभूत्वा मामिहोपासतेसदा।। (म. पु. 180/65 - 67)

ब्रह्मा और अन्य देवगण तथा सिद्ध लोग, जो मोक्षकामी हैं, इस क्षेत्र को सबसे श्रेष्ठ समझते हैं। भगवान् शिव कहते हैं कि मैं काशी को कभी भी नहीं छोड़ता और न ही कभी छोडूँगा, इसलिये इसका नाम अविमुक्तक्षेत्र है। (म. पु. 180/53 - 54)

विमुक्तं न मया यस्मान्मोक्ष्यते वा कदाचन।
महत् क्षेत्रमिदं तस्मादविमुक्तमिदंस्मृतम्।। (म. पु. 180/54)

शिवजी पार्वती से कहते हैं कि अविमुक्तक्षेत्र में मरनेवाले ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वर्णसंकर, मलेच्छ तथा कीट, पतंगे, चींटी, पशु और पक्षी आदि संकीर्ण जीव भी रुद्ररूप होकर मेरी सारूप्यता को प्राप्त कर लेते हैं।

ब्राह्मणाः क्षत्रियावैश्याः शूद्रा वै वर्णसङ्कराः।
कृमिम्लेच्छाश्चयेचान्ये सङ्कीर्णाः पापयोनयः।।
कीटाः पिपीलिकाश्चैव येचान्ये मृगपक्षिणः।
कालेन निधनं प्राप्ता अविमुक्तेशृणु प्रिये!।।
चन्द्रार्द्धमौलिनः सर्वे ललाटाक्षा वृषध्वजाः।
शिवे ममपुरे देवि! जायन्ते तत्र मानवाः।। (म. पु. 181/19-21)

अविमुक्तक्षेत्र के श्मशान के ऊपर भगवान् शिव का अदृश्य दिव्यधाम अवस्थित है। यह धाम भूलोक से भी जुड़ा हुआ है। यह शिवधाम आकाश में अवस्थित है। अयोगी लोगों को यह धाम अदृश्य रहता है, पर योगी, ब्रह्मचारी तथा वेदज्ञों के लिये यह दृश्य है।(म. पु. अ.182/6-7)

श्मशानसंस्थितं वेश्म दिव्यमन्तर्हितञ्च यत्।।
भूर्लोकेनैव संयुक्तमन्तरिक्षे शिवालयम्।
अयुक्तास्तु न पश्यन्ति युक्ताः पश्यन्तिचेतसा।। (म. पु. 182/6-7)

मणिकर्णिका(अविमुक्त का तीर्थविशेष) पर मरनेवाले के कान में स्वयं भगवान् शिव मन्त्र का उपदेश करते हैं जिससे वह मुक्त हो जाता है।(म. पु. 182/22-24)

अविमुक्त की तीर्थयात्रा से अधार्मिक, पापी और शठ आदि भी पापमुक्त हो जाते हैं। प्रलय हो जानेपर भी भगवान् शिव अविमुक्तक्षेत्र में अपने सैकड़ों गणों के साथ निवास करते हैं।(म. पु. 183/11-12)

पार्वती से शिवजी कहते हैं कि जिस प्रकार मेरे जैसा पुरुष और तुम्हारे जैसी स्त्री नहीं है उसी प्रकार अविमुक्ततीर्थ की भाँति कोई पवित्र तीर्थ नहीं है। यहाँ परमयोग, परमगति तथा परममोक्ष प्राप्त हो सकता है। इसके जैसा अन्य क्षेत्र नहीं है। सैकड़ों जन्म में योग की यदि उपलब्धि हो भी जाय तो मोक्ष की उपलब्धि में हजारों जन्म लग सकते हैं। पर मेरे भक्त अविमुक्तक्षेत्र में निःसन्देह एक ही जन्म में दुर्लभ योग और मोक्ष को प्राप्त कर लेते हैं।

मत्समः पुरुषो नास्ति त्वत्समा नास्तियोषिताम्।
अविमुक्तसमं क्षेत्रंनभूतंनभविष्यति।।
जन्मान्तरशतैर्देवि! योगोऽयं यदि लभ्यते।
मोक्षः शतसहस्रेण जन्मना लभ्यते न वा।।
अविमुक्तेन सन्देहो मद्भक्तः कृतनिश्चयः।
एकेन जन्मना सोऽपि योगं मोक्षं च विन्दति।। (म. पु. 183/35, 38-39)

अविमुक्तक्षेत्र के परिमाण को बताते हुए भगवान् शिव कहते हैं कि यह क्षेत्र पूर्व एवं पश्चिम दिशा में दो योजन विस्तारवाला है। इसकी चौड़ाई आधा योजन है जो उत्तर और दक्षिण की तरफ है

और इसके किनारे गंगा बहती है।(म. पु. 183/61-62)

शिवजी पुनः कहते हैं कि इस क्षेत्र में मेरे, विष्णु तथा सूर्य किसी के भी भक्त अगर आकर मर जाते हैं तो वे मेरे में ही लीन हो जाते हैं।(म. पु. 183/102)

वे आगे कहते हैं कि इस क्षेत्र में निवास करनेवालों के काम, क्रोध, लोभ, दम्भ, मत्सर, निद्रा, तन्द्रा तथा आलस्य आदि शत्रु हैं जो स्वयं इन्द्र द्वारा प्रेरित होते हैं।

कामः क्रोधश्चलोभश्च दम्भस्तम्भोऽतिमत्सरः।।
निद्रा तन्द्रातथाऽऽलस्यंपैशून्यमितितेदश।
अविमुक्तेस्थिताःविघ्नाः शक्रेणविहिताः स्वयम्।। (म. पु. 184/29-30)

देवता और ब्राह्मणों से द्वेष करनेवाले, ब्रह्महत्यारा, कृतघ्न, गुरुद्रोही, तीर्थ आदि को दूषित करनेवाले तथा अन्य प्रकार के पापों में सदा रहनेवाले को दण्डनायक यहाँ निवास नहीं करने देते। इसी प्रकार यहाँ जप, ध्यान और ज्ञान से हीन तथा दुःखी व्यक्ति भी मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं।(म. पु. 185/43-45, 64-65)

कामक्रोधेन लोभेन ग्रस्ता ये भुविमानवाः।
निष्क्रमन्तेनरा देवि! दण्डनायकमोहिताः।।
जपध्यानविहीनानां ज्ञानवर्जितचेतसाम्।
ततो दुःखहतानाञ्च गतिर्वाराणसी नृणाम्।। (म. पु. 185/64-65)

इस पुराण में काशी के विभिन्न तीर्थस्थलों का वर्णन किया गया है। इनमें प्रसिद्ध हैं- दशाश्वमेध, लोलार्क, केशव, बिन्दु माधव एवं मणिकर्णिका। इन सबमें मणिकर्णिका सर्वश्रेष्ठ तीर्थ है।

तीर्थानां पञ्चकं सारं विश्वेशानन्दकानने।
दशाश्वमेधं लोलार्कः केशवो बिन्दुमाधवः।।
पञ्चमी तु महाश्रेष्ठा प्रोच्यते मणिकर्णिका।
एभिस्तु तीर्थवर्यैश्च वर्ण्यते ह्यविमुक्तकम्।। (म. पु. 185/66-67)

इस पुराण में नर्मदा एवं उसके तटवर्ती क्षेत्रों में स्थित अनेक तीर्थों का वर्णन काफी विस्तार से मिलता है। नर्मदा की महिमा बताते हुए मार्कण्डेयजी युधिष्ठिर से कहते हैं कि गंगा को कनखल में तथा सरस्वती को कुरुक्षेत्र में पवित्र माना गया है परन्तु नर्मदा को सर्वत्र एक समान पवित्र माना गया है। सरस्वती का जल तीन दिन में, यमुना का जल सात दिन में तथा गंगा का तत्काल शुद्ध कर देता है परन्तु नर्मदा का जल मात्र दर्शन से ही पवित्र बना देता है। नर्मदा नदियों में श्रेष्ठ है और यह स्थावर एवं जंगम-सभी प्राणियों को तार देती है। इसके तटवर्ती स्थित सभी स्थावर-जंगम शिव को प्राप्त हो जाते हैं।

पुण्या कनखले गङ्गा कुरुक्षेत्रे सरस्वती।
ग्रामे वा यदि वाऽरण्ये पुण्या सर्वत्र नर्मदा।।
त्रिभिः सारस्वतं तोयं सप्ताहेन तु यामुनम्।
सद्यः पुनाति गाङ्गेयं दर्शनादेव नार्मदम्।।
नर्मदा सरितां श्रेष्ठा सर्वपापप्रणाशिनी।
तारयेत् सर्वभूतानि स्थावराणि चराणि च।। (म. पु. 186/10-11, 8)

नर्मदा के तटवर्ती एवं समीपवर्ती अनेक तीर्थों जैसे ज्वालेश्वर, अमरकण्टक, कावेरी संगम, मन्त्रेश्वर, विश्रुत, अगारेश्वर, करज, कोटि, अगस्त्येश्वर, इन्द्र, भीमेश्वर, सोम, नन्दी, कार्तिकेय, कपिला, ब्रह्म, भृगु तथा सिद्धार्थ आदि अनेक छोटे-बड़े तीर्थों का उल्लेख हम इस पुराण में पाते हैं।

(4) शैवव्रत

इस पुराण में शिवचतुर्दशी अथवा शिवरात्रि व्रत की विशेष महिमा बतायी गयी है। कहा गया है कि ब्रह्मा, बृहस्पति तथा इन्द्रादि कोई भी देवता इस व्रत के फल की महिमा का यथावत् वर्णन नहीं कर सकता।(म. पु. 95/35)

इस व्रत के करने से हजार अश्वमेध यज्ञों का फल प्राप्त होता है तथा सौ करोड़ कल्पोंतक शिव के गणों का अधिपति रहकर अन्त में व्यक्ति भगवान् शिव के पद को प्राप्त कर लेता है।

अनेन विधिना यस्तु कुर्याच्छिवचतुर्दशीम्।
सोऽश्वमेधसहस्रस्य फलंप्राप्नोतिमानवः।।

....

गणाधिपत्यं दिवि कल्पकोटिशतान्युषित्वा पदमेति शम्भोः।।

(म. पु. 95/32, 34)

व्रत के दिन स्नान, जप तथा उमासहित भगवान् शिव का पुष्प, गन्धादि द्वारा पूजन तथा अन्त में नमस्कार करना चाहिये।

त्रिदेवों की एकता

इस पुराण में भी तीनों प्रमुख देवों की तात्त्विक एकता के सूत्र प्राप्त होते हैं। एक स्थल पर देवगणों ने ब्रह्मा की स्तुति में कहा है कि रुद्ररूप में वे ही जगत् का संहार करते हैं(154/7)। इसी प्रकार देवता एवं दानव भगवान् विष्णु की स्तुति में उन्हें रुद्ररूप कहते हैं।

रुद्ररूपाय शर्व्वाय नमः संहारकारिणे।
नमः शूलायुधाधृष्य नमो दानवघातिने।। (म. पु. 249/39)

पुनः देव-दानवगण भगवान् शिव की स्तुति में उन्हें विष्णुरूप कहते हैं।

...................रुद्राय नमस्ते विष्णुरूपिणे।। (म. पु. 250/30)

इस प्रकार हम देखते हैं कि तीनों ही देव आपस में एक दूसरे का रूप धारण कर लेते हैं। विस्तारभय से हम ऐसे अनेक उद्धरणों की उपेक्षा कर दे रहे हैं जिनसे यह पता चलता है कि शिव ब्रह्मा तथा विष्णुरूप, विष्णु शिव एवं ब्रह्मारूप तथा ब्रह्मा शिव एवं विष्णुरूप धारण करते हैं। उपरोक्त तीनों प्रकरण(अ. 154 तथा 249-250) में ही हमें वे सभी उद्धरण प्राप्त हो जायँगे जिन्हें हमने विस्तारभय से छोड़ दिया है।

अतः निष्कर्ष यह निकलता है कि तीनों ही प्रमुख देवों में तात्त्विक एकता है। अन्तर केवल उनकी सृष्टि-प्रक्रिया में होनेवाली भूमिकाओं का है।

उपसंहार

पद्मपुराण तथा अन्य मान्यताओं के अनुसार यह एक शैवपुराण है जिसमें सात कल्पों की मिली-जुली कथा पायी जाती है। इस पुराण में भी भगवान् शिव को परमतत्त्व स्वीकार किया गया है, जिसके सगुण एवं निर्गुण दो रूप हैं। निर्गुणरूप में उन्हें प्रणवरूप, अव्यक्त, ब्रह्मा, विष्णु आदि देवों द्वारा अगम्य तथा भवातीत आदि कहा गया है। सगुणरूप में उन्हें जगत् की सृष्टि, स्थिति तथा प्रलय के कारण, नीलकण्ठ, जटा-जूट, चन्द्रमा, त्रिशूल, पिनाक आदि धारण करनेवाले, वरदाता, देवों के देव, पशुपति, त्रिनेत्र, विश्वरूप, ब्रह्मा, विष्णु, एवं रुद्ररूप, परम ज्ञान एवं कैवल्य प्रदान करनेवाले, उमापति, परमेश्वर, कालस्वरूप, शाश्वत, अजन्मा तथा भूतपति आदि-आदि कहा जाता है।

शिवोपासना भोग एवं मोक्ष दोनों प्रदान करनेवाली है। देव, दानव, मानव आदि सभी ने शिवोपासना से लाभ उठाया है। शुक्राचार्य, व्यास, बाणासुर, कुबेर, जैगीषव्य आदि ने शिवोपासना से दुर्लभ वर प्राप्त किये। भगवान् शिव की प्रसन्नता एवं अप्रसन्नता दोनों को ही लाभदायक बताया गया है। शिवोपासना में लिंग एवं मूर्ति दोनों की उपासना की जाती है। लिंग के मूल में ब्रह्मा, मध्य में विष्णु तथा अग्रभाग में रुद्र का निवास होता है। शिव की मूर्तियों में अर्धनारीश्वर तथा हरिहर मूर्ति की भी उपासना की जाती है। लिंग अनेक प्रकार की धातुओं, मिट्टी तथा पाषाण आदि से बनाये जा सकते हैं। इस पुराण में विभिन्न प्रकार की शिवप्रतिमायें तथा लिंगनिर्माण संबंधी महत्त्वपूर्ण निर्देश दिये गये हैं।

शैवतीर्थों में काशीक्षेत्र एवं नर्मदाक्षेत्र का बड़े ही विस्तार के साथ यहाँ वर्णन पाया जाता है। काशी में मरनेवाले सभी स्थावर-जंगम आदि को मुक्ति प्राप्त हो जाती है। काशी में मरनेवाले के कान में भगवान् शिव स्वयं मन्त्रोपदेश करते हैं जिससे वह मुक्त हो जाता है। काशी में पापकर्मीलोगों को हटाने के लिये दण्डनायक की नियुक्ति की गयी है। इसी प्रकार काशी में निवास करनेवालों के लिये

इन्द्र की तरफ से भी काम, क्रोध, आलस्य, निद्रा आदि बाधायें प्रस्तुत की जाती हैं। इन बाधाओंपर विजय प्राप्त करके ही काशीवास संभव हो सकता है।

नर्मदाक्षेत्र के माहात्म्य को बतलाते हुए कहा गया है कि इसके तटवर्ती स्थित सभी स्थावर-जंगम शिव को प्राप्त हो जाते हैं। सरस्वती, यमुना एवं गंगा से भी अधिक पवित्र करनेवाली नर्मदा है क्योंकि इसके दर्शनमात्र से ही पाप दूर हो जाते हैं। नर्मदा के तटवर्ती अथवा समीप स्थित अनेक तीर्थों जैसे अमरकण्टक, कावेरीसंगम तथा ज्वालेश्वर आदि का भी वर्णन किया गया है।

शिवरात्रिव्रत की असीम महिमा है। इसे करनेवाले को हजार अश्वमेधयज्ञ का फल तथा अन्त में शिवपद की प्राप्ति होती है।

अन्त में हम इस पुराण में तीनों प्रमुख देवों की तात्त्विक एकता के भी सूत्र पाते हैं।

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

भावशुद्धिः परम शौचम्

भावशुद्धिः परं शौचं प्रमाणं सर्वकर्मसु।।
अन्यथाऽऽलिङ्ग्यते कान्ताभावेन दुहिताऽन्यथा।
मनसा भिद्यते वृत्तिरभिन्नेष्वपि वस्तुषु।।
अन्यथैव सती पुत्रं चिन्तयेदन्यथा पतिम्।

(पद्ममहापु. भूमिखण्ड 66/86-88)

भावार्थ यह है कि भावना की शुद्धि ही सर्वश्रेष्ठ पवित्रता है तथा सभी कर्मों के पीछे निहित भावना का ही महत्त्व होता है। पत्नी एवं पुत्री-दोनों का ही आलिंगन किया जाता है किन्तु पत्नी के आलिंगन में दूसरा भाव होता है और पुत्री के आलिंगन में दूसरा। भिन्न-भिन्न वस्तुओं के प्रति मन की वृत्ति में भी भेद हो जाता है। नारी अपने पति का और भाव से चिन्तन करती है और पुत्र का और भाव से। यद्यपि यहाँ व्यवहार में समानता है परन्तु भावना में पृथ्वी आसमान का अन्तर है। अत: किसी आचरण की पवित्रता उसके पीछे निहित मानसिक भाव द्वारा निर्धारित होती है न कि वाह्याचरण से। इसीलिये गीता (3/7-8) में कहा गया है कि ऊपर से कर्मेन्द्रिय के संयममात्र से उसे त्यागी नहीं कहा जा सकता। त्यागी या संन्यासी वही कहलाता है जो मन से विषयों का चिन्तन नहीं करता यद्यपि वह बाहर से विषयों में वर्तता हुआ नजर आ सकता है।